प्रकाशक

अ० वा० सहस्रबुद्धे,

मत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-सघ

वर्धा (म० प्र०)

पहली बार २०,०००

जून, १९५५

मूल्य दो आने

मुद्रक

मुन्नीलाल

कल्याण प्रेस, बनारस

प्रवचन-तालिका

○

प्रकाशकीय

गत ता० ५१ मार्च १६५५ के दिन विनोबाजी जगन्नाथ-मन्दिर (पुरी) के दर्शनार्थ गये थे। उस दिन उनके साथ एक फ्रेंच महिला भी थीं। किन्तु मन्दिर के सचालकों ने उन्हें उस फ्रेंच महिला के साथ भीतर जाने देने से इनकार कर दिया। वहाँ यद्यपि हरिजन-प्रवेश निषिद्ध नहीं है, तथापि अहिंदुओं का प्रवेश निषिद्ध है और ऐसी सूचना वहाँ अकित है। भगवान् के दरबार में भाव-भक्ति से मानव मात्र को जाने का अधिकार है—ऐसा माननेवाले विनोबा उस फ्रेंच महिला को बाहर छोड कर भीतर जा नहीं सकते थे। इसलिए वे बिना दर्शनों के ही लौट आये।

इसी सिलसिले में दिनाक २१, २२ और २३ मार्च १६५५ को जगन्नाथपुरी में विनोबाजी ने जो प्रवचन किये, भगवान् के दरबार में जो निवेदन किया—उनका यह सकलन प्रकाशित किया जा रहा है। इन प्रवचनों में विनोबाजी ने धर्मतत्त्व और धर्म-समन्वय एव उपासना की पार्श्वभूमि को भिन्न-भिन्न तरीकों से समझाया है। भारतीय धर्म-परम्पराओं के विकास-क्रम और समन्वय की दृष्टि से ये प्रवचन कितने महत्त्वपूर्ण हैं, कहने की आवश्यकता नहीं।

धर्म-स्थानों को जेल मत बनने दीजिए

जगन्नाथपुरी,
२१ मार्च '५५

हिन्दू-धर्म

बहुत लोगों को मालूम हुआ होगा कि आज सुबह हम जगन्नाथ के दर्शन के लिए मन्दिर तक गये थे और वहाँ से हमको वापिस लौटना पड़ा। हम तो बहुत भक्ति-भाव से गये थे। हमारे साथ एक फ्रेंच बहिन भी थी। अगर वह मन्दिर में नहीं जा सकती है, तो फिर हम भी नहीं जा सकते हैं, ऐसा हमको हमारा धर्म लगा। हमने तो हिन्दू-धर्म का बचपन से आज तक सतत अध्ययन किया है। ऋग्वेद आदि से लेकर रामकृष्ण परमहंस और महात्मा गांधी तक धर्म-विचार की जो परंपरा यहाँ पर चली आयी है, सबका हमने बहुत भक्ति-भाव पूर्वक अध्ययन किया है। हमारा नम्र दावा है कि हिन्दू-धर्म को हम जिस तरह समझे हैं, उस रूप में उसके नित्य आचरण का हमारा नम्र प्रयत्न रहा है। आज हमको लगा कि उस फ्रेंच बहन को बाहर रखकर हम अन्दर जाते, तो हमारे लिए बड़ा अधर्म होता। हमने वहाँ के अधिष्ठाता से पूछा कि क्या इस बहन के साथ हमको अंदर प्रवेश मिल सकता है? जवाब मिला कि नहीं मिल सकता। तो, भगवान् की जगह उन्हींको भक्ति-भाव से प्रणाम करके हम वापस लौटे।

सस्कार के प्रभाव में

जिन्होंने हमको अन्दर जाने देने से इनकार किया, उनके लिए हम कौन-सा शब्द इस्तेमाल करें, यही नहीं सूझ रहा है। इतना ही कहते हैं कि उनके लिए हमारे मन में किसी प्रकार का न्यून भाव नहीं है। मैं जानता हूँ कि उनको भी दु:ख हुआ होगा, परतु वे एक सस्कार के वश थे, इसलिए लाचार थे। उनको इसलिए हम ज्यादा दोप भी नहीं देते। इतना ही कहते हैं कि हमारे देश के लिए और हमारे धर्म के लिए यह बड़ी ही दु खदायक घटना है। हमने कल के व्याख्यान में ही ज़िक्र किया था कि बाबा नानक को यहाँ पर मदिर के अन्दर जाने का मौक़ा नहीं मिला था और बाहर ही से उन्हें लौटना पड़ा था। लेकिन वह तो पुरानी घटना हुई। चार-साढ़े चार सौ साल पहले की बात थी। हम आशा रखते थे कि अब वह बात फिर से नहीं दुहरायी जायगी।

हिन्दू-धर्म को खतरा

हमारे लिए सोचने की बात है कि वह जो फ्रेंच बहन हमारे साथ आयी, वह कौन है? वह अहिंसा मे और मानव-प्रेम मे विश्वास रखने वाली एक बहन है और गरीबों की सेवा के लिए जो भूदान-यज्ञ का काम चल रहा है, उसके लिए उसके मन में बहुत आदर है। इसलिए वह देखने के वास्ते हमारे साथ घूम रही है। आपको मालूम है कि महाराज युधिष्ठिर के लिए जब स्वर्ग का द्वार खुल गया था, और उनके साथी को अंदर जाने से मना किया, तो वे भी अदर नहीं गये। वह जो बहन हमारे साथ घूम रही है, हम समझते हैं कि परमेश्वर की भक्ति उसके मन में दूसरे किसीसे कम नहीं है। हमारे भागवत-धर्म

न तो यह दावा किया है कि जिसके हृदय में ईश्वर की भक्ति है, वह ईश्वर का प्यारा है, चाहे वह किसी भी जाति का या किसी भी धर्म का क्यों न हो। ब्राह्मण भी क्यों न हो और बहुत-सारे दुनिया के गुण उसमें हों, तो भी उसमें यदि भक्ति नहीं है, तो उससे वह एक चांडाल भी श्रेष्ठ है, जिसके हृदय मे भक्ति है। भागवत-धर्म और उसकी प्रतिष्ठा उड़ीसा में सर्वत्र है। उड़िया भाषा का सर्वोत्तम ग्रंथ है, जगन्नाथदास का भागवत। जगन्नाथ-मंदिर के लिए भी—नानक की पुरानी बात छोड़ दीजिए—परंतु, यह ख्याति रही कि यहाँ पर बड़ा उदार वैष्णव-धर्म चलता है। आप लोगों को समझना चाहिए कि इन दिनों हर कौम की और हर धर्म की कसौटी होने जा रही है। जो सम्प्रदाय, जो धर्म, उस कसौटी पर टिकेंगे, वे ही टिकेंगे, बाकी के नहीं टिक सकते। अगर हम अपने को चारदीवारी मे बंद कर लेंगे, तो हमारी उन्नति नहीं हो सकेगी और जिस उदारता का हिंदू-धर्म मे विस्तार हुआ है, उसकी समाप्ति हो जायगी। धर्मविचार मे उदारता होनी चाहिए। समझना चाहिए कि जो भी कोई जिज्ञासु हो, उनके सामने अपना विचार रखना और प्रेम से उससे वार्तालाप करना भक्त का लक्षण है। जैसे दूसरे धर्म वाले यहाँ तक आगे बढ़ते हैं कि अपनी बातें जबरदस्ती दूसरों पर लादते जाते हैं, वैसा तो हमको नहीं करना चाहिए। परंतु हमारे मंदिर, हमारे ग्रंथ, सब जिज्ञासुओं के लिए खुले होने चाहिए। हमारा हृदय सबके लिए खुला होना चाहिए, मुक्त होना चाहिए। अपने धर्म-स्थानों को एक जेल के माफिक बना देना हमारे लिए बड़ा हानिकारक होगा और उनमें सज्जनों को प्रवेश कराने में हिचकिचाहट रही, तो मंदिरों के लिए आज जो थोड़ी-बहुत श्रद्धा बची हुई है, वह भी खतम हो जायगी।

सनातनियों द्वारा ही धर्महानि

हमको समझना चाहिए कि आखिर धर्म का संदेश किसके लिए है ? चद लोगों के लिए है या दुनिया के लिए ? हम आपसे कहना चाहते हैं कि हम जब वेद का अध्ययन करना चाहते थे, तब ऋग्वेद का उत्तम संस्करण, सायण भाष्य के साथ हमें मैक्समूलर का किया हुआ मिला। दूसरा कोई उतना अच्छा नहीं मिला। यह बात तो मैं कोई तीस-बत्तीस साल पहले की कह रहा हूँ। अब तो पूना के तिलकविद्यापीठ ने सायण-भाष्य के साथ ऋग्वेद का अच्छा सस्करण निकाला है। परतु उन दिनो तो मैक्समूलर का ही सबसे उत्तम संस्करण मिलता था। उसमें कम से-कम गलतियाँ, उत्तम छपाई, सस्वर, शुद्ध स्वर के साथ, उच्चारण था। एक जमाना था, जब वेद के अध्ययन के लिए यहाँ पर कुछ प्रतिबंध लगाया गया था, लेकिन उन दिनो लेखन-कला नहीं थी। छापने की कला तो थी ही नहीं। उन दिनों उच्चारण ठीक रहें, पाठ-भेद न हो और वेदो की रक्षा हो, इस दृष्टि से वैसा किया गया होगा। उस जमाने की बात अगर कोई इस जमाने में करेगा और कहेगा कि वेदाध्ययन का अधिकार केवल ब्राह्मण को ही है, दूसरों को नहीं, तो वह मूर्खता की बात होगी। वेदों का अच्छा अध्ययन जर्मनी में हुआ है, रूस में, फ्रांस मे और इग्लैंड में भी हुआ है। ऋग्वेद के ही नहीं, बल्कि सारे वेदो के, सब मत्रों की सूची और सग्रह ब्रूमफील्ड नाम के लेखक ने बहुत अच्छे ढग से किया है। उसकी तुलना में उतना अच्छा दूसरा ग्रथ नहीं मिलेगा। दूसरे ऐसे बीसों ग्रथों का हम नाम ले सकते हैं। वे सारे ग्रथ हाथ में रख कर उनके आधार पर ऋग्वेद का अध्ययन करने में हमें मदद मिली है। अगर इन दिनो कोई पुरानी बात

करना है, तो उसका मतलब यह हुआ कि हम समझते ही नहीं कि ज़माना क्या है। जैसे-जैसे ज़माना बदलता है, वैसे-वैसे बाह्य-रूप भी बदलना पड़ता है, लेकिन हमारे सनातन-धर्मी संकुचित लोगों ने सनातन धर्म का जितना नुकसान किया है, उतना नुकसान शायद ही दूसरे किसीने इस धर्म का किया हो।

क़रीब सौ साल पहले की बात है। ज़बरदस्ती से सैकड़ों कश्मीरी लोग मुसलमान बनाये गये थे। वह बात तो ज़बरदस्ती की थी। लेकिन उन लोगों को पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने फिर से हिन्दू-धर्म में आना चाहा। उन्होंने काशी के ब्राह्मणों से पूछा, तो उन्होंने उनको वापिस लेने से इनकार किया और कहा कि ऐसे भ्रष्ट लोगों को हमारे धर्म में स्थान नहीं है, हम उनको नहीं ले सकते! लेकिन नोआखाली इत्यादि में जो काण्ड हुआ उसमें सैकड़ों हिन्दू ज़बरदस्ती से मुसलमान हो गये, तो उनको वापिस लेने में काशी के पंडितों को शास्त्र में आधार मिल गया और वे उनको वापिस लेने के लिए उत्सुक हो गये। यह बात सौ साल पहले हमको नहीं सूझी थी। अब सूझ गयी है। जिसको समय पर बुद्धि आती है, उसीको ज्ञानी कहते हैं। उसीसे धर्म की रक्षा होती है।

मनु का धर्म मानवमात्र के लिए

बहुत आश्चर्य की बात है कि इन दिनों हिन्दू-धर्म का शायद बहुत ही उत्तम आदर्श जिन्होंने अपने जीवन में रक्खा, उनको, महात्मा गांधीजी को, सनातनी लोग धर्म-विरोधी कहते हैं। हम समझते हैं कि हिन्दू-धर्म का बचाव और इज्जत जितनी गांधीजी ने की, उतना शायद ही दूसरे किसी व्यक्ति ने

पिछले एक हजार साल में की होगी। लेकिन ऐसे शख्स को सनातनी हिन्दू लोग धर्म का विरोधी मानते हैं और अपने को धर्म का रक्षक मानते हैं। यह बड़ी भयानक दशा है। इन सनातनियों को समझना चाहिए कि जिस धर्म को वे प्यार करते हैं, उस धर्म को उनके ऐसे कृत्य से बड़ी हानि पहुँचती है। जब कि हिंदुस्तान को स्वतंत्रता मिली है और हिंदुस्तान की हरएक बात की तरफ दुनिया की निगाह लगी हुई है, हिंदुस्तान से दुनिया को आशा है, तब ऐसी घटना घटती है, तो दुनिया पर उसका क्या असर होगा, इसे आप जरा सोचिए। मनु महाराज ने आशा प्रकट की थी और मैंने कल ही उनका यह श्लोक सुनाया था :

एतद्-देश-प्रसूतस्य सकाशाद् अग्र-जन्मन. ।
स्व-स्व चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या सर्व मानवा ॥

पृथ्वी के सब मानव इस देश के लोगों से यदि चरित्र की शिक्षा पायेंगे, तो क्या इसी ढंग से पायेंगे कि वे हमारे नज़दीक आना चाहेंगे तो भी हम उन्हें नज़दीक नहीं आने देंगे ? जब मनु महाराज ने पृथिव्याम् सर्व मानवा. कहा, तो उन्होंने अपने दिल की उदारता ही प्रकट की। मनु ने जो धर्म बतलाया था, वह मानव-धर्म कहा जाता है। वह धम सब मानवों के लिए है। यह ठीक है कि हम अपनी बात दूसरों पर न लादें, परन्तु दूसरे हमारे नजदीक आना चाहते हों, तो हम उन्हें आने भी न दें, यह कैसी बात है ! मैं चाहता हूँ कि इस पर हमारे यहाँ के लोग अच्छी तरह से गौर करें और भागवत-धर्म की प्रतिष्ठा किस चीज में है, इस पर विचार करें।

क्रोध नहीं, दुःख

चंद दिन पहले मैं उड़िया का एक भजन पढ़ रहा था, साल-

वेग का। उसमें कहा है कि मैं तो दीन जाति का यवन हूँ और मैं श्रीरंग की कृपा चाहता हूँ। ऐसा भजन जिसमें है, उस भागवत-धर्म के लिए क्या यह शोभा देता है कि एक स्वच्छ, शुद्ध, निर्मल हृदय की बहन को मंदिर मे आने से रोक दे? उस बहन के आने से क्या वह मंदिर भ्रष्ट हो जायगा? मुझे कोई क्रोध नहीं आया, जब उसको वहाँ जाने से इनकार किया गया, परंतु मुझे दुःख हुआ, अत्यन्त दुःख हुआ। आज दिन भर वह बात मेरे मन मे थी। मैं नहीं समझता कि इस तरह की संकुचितता हम अपने मे रखेंगे, तो हिन्दू-धर्म कैसे बढ़ेगा या उसकी उन्नति कैसे होगी।

देश की भी हानि

आप लोग जानते हैं कि वैदिक-काल मे पशु-हिंसा के यज्ञ चलते थे, परन्तु भागवत-धर्म ने तो उसका निषेध किया और उसे बंद किया। जगन्नाथदास के 'भागवत' मे भी वह बात है। बुद्ध भगवान् ने तो सीधे यज्ञ-संस्था पर ही प्रहार किया था। तब तो वह बात कुछ कटु लगी थी, परंतु उसके बाद हिंदुओं ने उनकी बात मान ली थी और विशेषकर भागवत-धर्म ने उसको स्वीकार किया। इस तरह पुरानी कल्पनाओं का सतत संशोधन करते आये हैं। आज का हिन्दू-धर्म और भागवत-धर्म प्राचीन वैदिक धर्म मे जो कुछ गलत चीजें थीं, उनको सुधार करके बना है। वेदों में तो मुझे ऐसी कल्पना के लिए कोई आधार नहीं मिलता है। फिर भी उस जमाने में पशु-हिंसा चलती थी, यज्ञ में पशु-हिंसा की जाती थी। इस यज्ञ-संस्था पर बुद्ध भगवान् ने एक तरह से प्रहार किया। परंतु गीता ने तो उसका स्वरूप ही बदल दिया और उसे आध्यात्मिक स्वरूप

दिया और आजकल ये जप-यज्ञ, तप-यज्ञ, दान-यज्ञ, ज्ञान-यज्ञ आदि सब रूढ हो गये हैं। तो, पुरानी संकुचित कल्पना को धर्म के नाम से पकड़ रखना धर्म का लक्षण नहीं है। हिंदू-धर्म का तो सतत विकास होता आ रहा है। इतना विकास-क्षम धर्म दूसरा कोई नहीं होगा। जिस धर्म में छ-छः परस्पर विरोधी दर्शनों का संग्रह है, जिसने द्वैत-अद्वैत को अपने पेट में समा लिया है, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के देवताओं की पूजा को स्थान दिया गया है और जिसमें किसी भी प्रकार के आचार का आग्रह नहीं है, उससे उदार धर्म दूसरा कौन-सा हो सकता है? हिंदू-धर्म में एक जाति में एक प्रकार का आचार है, तो दूसरी जाति में उससे भिन्न आचार है। एक प्रदेश में एक आचार है, तो दूसरे प्रदेश में भिन्न आचार है। इतना निराग्रही, सर्वसमावेशक और व्यापक धर्म मिला है और फिर भी हम उसे संकुचित बना लेते हैं, तो इसमें हम देश का ही नुक़सान करते हैं।

मैं चाहता हूँ कि इस पर आप लोग गौर करें। सही मैं परमेश्वर का उपकार मानता हूँ कि जिन विचारों पर मेरी श्रद्धा है, उन विचारों पर अमल करने की शक्ति वह मुझे देता है। इस तरह भगवान् मुझे निरंतर सद्विचार पर आचरण करने का बल देगा, ऐसी आशा है। मैं मानता हूँ कि आज मंदिर में जाने से इनकार करके मुझे जो एक बडा सौभाग्य, जो एक बड़ा लाभ मिला था, उसका मैंने त्याग किया। एक श्रद्धालु मनुष्य को आज मंदिर में प्रवेश करने से रोका गया है, यह बात मैं भगवान् के दरबार में निवेदन करना चाहता हूँ। आप सब लोगों को मेरे भक्ति-भाव से प्रणाम!

सायं-प्रार्थना-प्रवचन : २

सच्ची धर्म-दृष्टि

जगन्नाथपुरी,
२२ मार्च '५५

कल हमने मंदिर-प्रवेश का लाभ लेने से इनकार किया। यह घटना बहुत चिंतनीय है और उसमे जो कुछ विचार रहे हैं, उनकी तरफ मैं आपका ध्यान खींचना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि उस घटना के विषय मे क्षोभयुक्त मनोवृत्ति से कुछ सोचा जाय; बल्कि शांत वृत्ति से सोचा जाय; क्योंकि जिन्होंने हमको प्रवेश देने से इनकार किया, उनके मन मे भी धर्म-दृष्टि काम कर रही है और हमने जो प्रवेश करने से इनकार किया, उसमे भी धर्म-दृष्टि काम कर रही थी। यानी दोनो बाजू से धर्म-दृष्टि का दावा किया जा सकता है। अब सोचना इतना ही है कि इस काल मे और इस परिस्थिति मे धर्म की दृष्टि क्या होनी चाहिए।

मैं महसूस करता हूँ कि एक विशेष जमाने मे यह भी हो सकता था कि उपासना के स्थान अपने-अपने लिए सीमित किये जा सकते थे। कहीं एकान्त मे ध्यान हो सकता था। पठन-पाठन कहा था कि वेद-रक्षण के लिए एक जमाने मे ...की जरूरत पाठन पर मर्यादा लगायी थी, पर इस जमाने ...न पर ही प्रहार नहीं है। आज वैसा करने जाओ, तो वेद के ...ना के स्थानों के लिए हो जायगा। यही न्याय सार्वजनिक ...म गहन स्थान मे दुर्गम भी लागू होता है। जैसे नदी का [illegible] उद्गम, वेद की प्रेरणा, कुछ गुफा से होता है, वैसे ही धर्म ~

व्यक्तियों के हृदय के अंदर से होती है। अनादि काल से कुछ विशेष मानवों को, जिनको आर्ष-दर्शन था, धर्म-दृष्टि थी। उसके सगोपन के लिए विशेष एकान्त स्थान वे चाहते होंगे। उन्होंने उस जमाने में यही सोचा होगा कि यह धर्म-दृष्टि ऐसे ही लोगों को समझायी जाय, जो समझ सकते हैं। अन्यथा गलतफ़हमी होगी, उसे कुछ ग़लत समझेंगे, इसलिए अधर्म होगा। परिणामस्वरूप उस अति प्राचीन काल मे, जब वैदिक धर्म का आरभ हुआ था, लोग सोचते होंगे कि कुछ खास मडलों के लिए ही यह उपासना हो और वह उपासना इस तरह सीमित हो। पर जैसे नदी उस दुर्गम गुहा से, उस अज्ञात स्थान से, बाहर निकलती है, आगे बढती है और मैदान मे बहना शुरू करती है, तो वह सब लोगों के लिए सुगम हो जाती है, वैसे ही हमको भी समझना चाहिए कि वैदिक धर्म-की नदी उस दुर्गम स्थान से काफ़ी आगे बढ चुकी है और विशेषत वैष्णवों के जमाने मे वह सब लोगों के लिए काफी सुलभ-सुगम हो चुकी है। इसलिए नदी के उद्‌गम-स्थान में, उसके सल्प से पानी को पावनता के लिए जो चिंता करनी पड़ती है, चिंता, जहाँ नदी उद्‌गम से दूर बहती है और समुद्र के पास में जो है, वहाँ नहीं करनी पड़ती। इसलिए बीच के जमाने रूढ़वाद था, हिन्दुस्तान मे, वह गूढवाद था। वह आखिर ध्यान में चितन या। फिर गूढवाद मिट गया और एकांत प्राचीन ग्रन्थो में मूहिक भजन, कीर्तन को जगह दे दी गयी। करना धर्म है और खा है कि सत्ययुग में एकात ध्यान-चिंतन करना धर्म है। परिणाम युग मे सामूहिक भजन, नाम-सकीर्तन का सवाल है, यहाँ का यह हुआ कि जहाँ तक भारत का भक्ति र्ग इतना व्यापक हो गया है,

यहाँ तक व्यापक हो गया है, कि उसमें सबका समावेश हो गया। भक्ति के जितने प्रकार हो सकते थे, उन सबके भक्ति-मार्ग प्रकट हो गये। अद्वैत आया, द्वैत आया, विशिष्टाद्वैत आया, शुद्ध अद्वैत आया, केवल अद्वैत आया, द्वैताद्वैत आया, संकेत आया, पूजा आयी, मूर्ति-पूजा आयी, नाम-स्मरण आया और जप-तप भी आया। इस प्रकार जितने अंग हो सकते थे, भक्ति-मार्ग के, वे सारे-के-सारे हिन्दू-धर्म में विकसित हो गये और मानवता में बिल्कुल फर्क नहीं हो सकता, इस बुनियाद पर भक्ति मार्ग का अधिष्ठान स्थिर हो गया, दृढ़ हो गया। केवल ध्यानमय जो धर्म था, वह कृष्णार्पणमय हो कर फल-त्यागयुक्त सेवामय हो गया। इसलिए भगवान् ने कहा है— "ध्यानात् कर्म फलत्यागः।" यानी ध्यान से भी सेवामय फल-त्याग का भक्ति श्रेष्ठ है। लेकिन एक जमाना होता है, जब ध्यान-धारणा करनी होती है। उसके बिना धर्म का आरंभ ही नहीं होता। उसी ध्यान-चिंतन के परिणामस्वरूप नाम-संकीर्तन-मूलक भक्ति-मार्ग और फलत्यागयुक्त सेवा का मार्ग खुल गया था। इसलिए संभव है कि जिस जमाने में ये मंदिर बने होंगे, उस जमाने में कुछ खास उपासकों को ही उनमें स्थान मिलता होगा। यही धर्म-दृष्टि से उचित है, ऐसा वे मानते होंगे।

अपने पाँव पर कुल्हाड़ी

हमारे सामने सोचने की बात यह है कि आज जब हिन्दुस्तान का भक्ति-मार्ग इतना व्यापक हो चुका है, इतना विकसित हो चुका है कि उसमें सारे धर्म-संप्रदाय आ गये हैं, उस हालत में हमें अपने-अपने उपासना-स्थान सबके लिए खुले करने चाहिए या नहीं? मेरी राय है कि अगर हिन्दू-धर्म

इस वक्त अपने को सीमित रखने की कोशिश करेगा, संकुचित करेगा, अपने को चंद लोगों तक ही महदूद करेगा, तो वह खुद पर ही प्रहार करेगा और नष्ट होगा, मिट जायगा। इसलिए वैदिक धर्म का जो रूप था, वैदिक जमाने में, उसे छन्दोवद्ध याने ढँका हुआ कहते थे, वह अब नहीं होना चाहिए। वह अब खुला होना चाहिए। इसलिए प्राचीन काल मे जो गुप्त मत्र होते थे, उनके वदले मे कलियुग में राम, कृष्ण, हरि जैसे नाम ही खुले मंत्र के रूप में आ गये। उसमें नाम-स्मरण आ गया। यही उत्तम भक्ति-मार्ग है, ऐसा भक्त कहते हैं। अव जिस सगुण मूर्ति के सामने राम, कृष्ण जैसे खुले मत्र चले होंगे, उनके उद्देश्य को तो हम समझे नहीं और अपने को ही काटते हैं। इस-लिए जगन्नाथ-मदिर के जो अधिष्ठाता लोग हैं और मदिर की जिम्मेवारी जो अपने ऊपर मानते हैं, वे भी इस वात पर सोचें, ऐसी मेरी नम्र विनती है। अगर वे इस दृष्टि से सोचेंगे, तो उनके ध्यान मे आयेगा कि कल हमने उस फ्रेंच वहन को छोड कर मदिर में जाने से इनकार क्यो किया और फिर उनके ध्यान में आयेगा कि कल उन्होंने हमको जो रोका वह धर्म-दृष्टि से ठीक नहीं हुआ। अगर वे विचार करेंगे, तो उनकी समझ में आयेगा कि उन मदिरों की पवित्रता इसी में है कि जो भक्ति-भाव से आना चाहते हैं, उनको प्रवेश दिया जाय, तभी उनका पतित-पावनत्व सार्थक होगा। ० ०

समन्वय पर प्रहार मत होने दीजिए

जगन्नाथपुरी,
२३ मार्च '५५

सर्वोदय की दृष्टि

आप सब लोग जानते हैं कि हम सर्वोदय के विचारक कहलाते हैं और भूदान के काम मे लगे हुए हैं और उसी के चिंतन मे हमारा प्रतिदिन का समय जाता है। इसलिए पूछा जायगा कि इस प्रश्न को हम क्यो इतना महत्त्व दे रहे हैं और तीन-तीन व्याख्यान क्यो दे रहे हैं, तो इसका उत्तर यह है कि यह विषय सर्वोदय के लिए ही नहीं, बल्कि धर्म-विचार के लिए भी, बहुत महत्त्व का है। इसका ठीक निर्णय हमारे मन मे न हो, तो केवल धर्म ही नहीं, बल्कि सर्वोदय ही टूट जायगा। मान लीजिए कि हम देशाभिमान की बात करते हैं, तो वह देश-प्रेम बहुत व्यापक चीज़ ज़रूर है, पर मानवता की दृष्टि से वह भी छोटी, संकुचित होती है। पर जिसे हम धर्म-भावना कहते हैं, वह मानवता से छोटी चीज नहीं है, मानवता से बड़ी चीज़ है। धर्म के नाम पर जब हम मानवता से भी छोटे बन जाते हैं, तो हम धर्म को भी संकुचित करते हैं और धर्म की जो मुख्य चीज है, उसे छोडते हैं। धार्मिक पुरुप की धर्म-भावना मे न सिर्फ मानव के लिए ही प्रेम होता है, असंकोच होता है, बल्कि प्राणीमात्र के लिए प्रेम होता है और असंकोच होता है। अपने-अपने खयाल से और मन के संतोप के लिए मनुष्य अलग-अलग उपासना करते हैं। इस तरह उपासनाएँ अलग-अलग बन जाती हैं। उन उपासनाओ के मूल मे जो भक्ति है, वह सबसे बड़ी चीज़ है, मानवता से भी व्यापक है। लोग हमसे पूछते हैं कि

क्या सर्वोदय-समाज में कोई मुसलमान नहीं रहेंगे, हिंदू नहीं रहेंगे, क्रिस्ती नहीं रहेंगे, तो हम जवाब देते हैं कि ये सारे-के-सारे रहेंगे और ये सब सर्वोदय के अंग हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि हिंदू, मुस्लिम या क्रिस्ती-धर्म के नाम पर जो गलत धारणाएँ चल पड़ी, वे भी इसमें होगी। वे तो इसमें नहीं रहेंगी, बल्कि उपासना की जो भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ हैं और जो व्यापक भावना है, वह सर्वोदय मे अमान्य नही है। लेकिन सर्वोदय मे यह नहीं हो सकेगा कि एक तरह की उपासना करने का ढग कोई दूसरे किसी उपासना के स्थान मे, मदिर मे, उपासना करने के लिए जाना चाहे तो उसे रोका जाय। चाहे वह भिन्न उपासना क्यों न करता हो, उसे रोकना नही चाहिए, चाहे हिन्दू का मदिर हो, चाहे मुसलमान का मंदिर हो, चाहे क्रिस्तियों का मदिर हो, या दूसरे किसी के मदिर हों। जो उपासना के लिए एक मन्दिर में जाना चाहता है, वह उपासना के लिए दूसरे किसी भी मन्दिर मे न जाय, ऐसा नही कह सकते। जैसी रुचि होगी, वैसे लोग जायँगे। इस तरह से भिन्न-भिन्न उपासना के मन्दिरों में लोग जायेंगे और सर्वोदय-समाज में यह किसीके लिए लाजिम नहीं होगा कि खास वह किसी फलाने मदिर में ही जाय। एक मदिर मे जा कर प्रेम से उपासना करने वाला दूसरे मदिर में भी अगर जाना चाहता है, प्रेम से उस उपासना में योग देना चाहता है, प्रेम से उस उपासना को जानना चाहता है, तो उसे रोकना अत्यन्त गलत चीज है।

उपासना के बधन नहीं

आप लोगों ने रामकृष्ण परमहस का नाम जरूर सुना होगा और आप जानते हैं कि पिछले सौ साल में जो महान् पुरुष हिन्दू धर्म में पैदा हुए उनमे अग्रगण्य पुरुषों में उनकी गिनती होती है। उन्होंने विभिन्न धर्मों की उपासनाओं का अध्ययन किया था और उन